चन्दामामा
मासिक
June '56
6

कोसल के राजा का नाम चन्द्रपीड़ था। उनके यहाँ धवलमुख नाम का एक नौकर था। घबलमुख कभी भी महल से सीधे घर न जाया करता था। कहीं खाना खा काफी देर बाद घर पहुँचता।

एक दिन धवलमुख की पत्नी ने अपने पति से पूछा-"क्यों जी! आप रोज कहीं न कही भोजन कर आते हैं। आपको रोज़ भोजन देता कौन है?"

"मेरे दो अच्छे दोस्त हैं। उनमें से एक का नाम कल्याण वर्मा है। उससे चाहे मैं कुछ भी माँग लूँ, वह मुझे दे देगा। भोजन के बारे में तो अलग कहने की ज़रूरत ही नहीं। दूसरा दोस्त बीरबाहु है। वह मेरा इतना पक्का दोस्त है कि अगर मौका आ पड़े तो मेरे लिये वह जान भी दे देगा।" धवलमुख ने पत्नी से कहा।

यह जानकर कि उसके पति के दो इतने के दोस्त हैं, उसकी पत्नी बड़ी सन्तुष्ट हुई। "कभी आप मुझे अपने दोस्त दिखाइये न।" पत्नी ने पति से पूछा।

"इसमें क्या रखा है? कल दोनों को देख आयेंगे।" धवलमुख ने कहा।

अगले दिन वे पहले पहल कल्याण वर्मा के घर गये। कल्याण वर्मा ने उन दोनों की खूब आवभगत की, भोजन खिलाया, आदर-सत्कार किया। धवलमुख की पत्नी को विश्वास हो गया कि जो कुछ उसके पति ने कल्याण वर्मा के बारे में कहा था, रत्ती भर भी अतिशयोक्ति न थी।

तब दोनों वीरबाहु के घर गये। वीरबाहु किसी के साथ शतरञ्ज खेलने में मस्त था। उसने धवलमुख को देखकर कहा-"अरे ! तुम भी आ गये, बैठो।" वह फिर शतरञ्ज

श्री मनोहर दास गुप्त

खेलने लगा। पति-पत्नी थोड़ी देर तो बैठे रहे, फिर उन्होंने वीरबाहु से कहा-"हम जा रहे हैं।" वीरबाहु ने बिना सिर हिलाये कहा-"अच्छा, जाओ।"

पत्नी ने पति से कहा-"आप तो कह रहे थे कि वीरबाहु आपका अधिक पक्का दोस्त है; पर कल्याण वर्मा ने ही उससे कहीं अधिक आवभगत की।"

अगर तुम उन दोनों में भेद जानना चाहती हो तो कल उनमें से किसी के पास जाकर कहना कि राजा को मुझ पर गुस्सा आ गया है। तब जो गुज़रेगा तुम ही देख लेना।" धवलमुख ने पत्नी से कहा।

अगले दिन पत्नी ने पहले कल्याण वर्मा के घर जाकर कहा-"मेरे पति पर राजा नाराज हैं। अब वे बड़ी बिपत्ति में हैं। क्या आप अपने मित्र की कुछ मदद कर सकेंगे?"

कल्याण वर्मा यह सुन हैरान हो गया। "मैं व्यापारी हूँ। राजा के विरुद्ध भला मैं क्या कर सकता हूँ? तुम्हारे पति के लिये अच्छा है कि वह जल्दी ही देश छोड़कर कहीं चला जाये।" उसने कहा।

घबलमुख की पत्नी वहाँ से वीरबाहु के घर गई और उससे भी यही बात कही। वह झट अपनी ढाल, कटार लेकर धवलमुख के पास गया-"दोस्त! बताओ। कौन है वह माई का लाल, जिसने तुम पर राजा को गुस्सा दिलवाया है। झट में उसका खातमा कर दूँगा।" उसने जोश में कहा।

"अरे बैठो। कोई नहीं। मन्त्री जी ने राजा को फिर खुश कर दिया है।" धवलमुख ने कहा।

वीरबाहु के चले जाने के बाद धवलमुख ने पत्नी से पूछा-"तुमने अपनी आँखों से देख लिया न, अब दोनों में अन्तर ?"

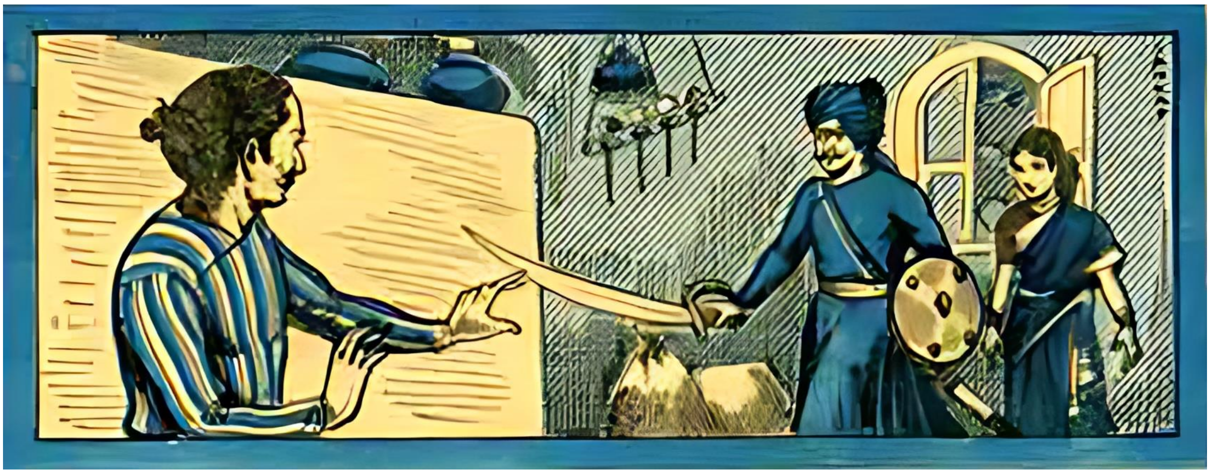

[११]

[जब जङ्गली सरदारों को यह मालूम हुआ कि नरबाहन ने उनके प्रदेश को किसी और को दे दिया है तो से बड़े नाराज हुए। मेडिया गाँव में उन्होंने एक अपनी सभा बुलाई और निश्चय किया कि वे नरवाहन का विरोध करेंगे। फिर उन्होंने नरवाहन के पास एक दूत भेजा। बाद में ---]

भेड़िया गाँव में जङ्गलियों की बैठक के ज्याद जो कुछ हुआ, शिवदत्त कहता जा रहा था और मन्दरदेव सुनता जा रहा था।

"जिस बात का डर था वह ही हुआ। जिन दो युवकों ने दूत को गधे पर चढ़े आते देखा था वे उसकी ओर भागे और थोड़ी देर बाद उसको गाँव में ले आये। उस बचारे ने क्या क्या मुसीबतें झेली थी, इसका आसानी से अन्दाजा लगाया जा सकता था।" शिवदत्त ने कहा।

दूत ने अपने सारे कष्ट मुनाये। सैनिक उसको नरवाहन के पास ले गये थे। जङ्गली सरदार का सन्देश पढ़ नरवाहन आग बबूला हो गया। उसने दूत को पचास कोड़े लगवाये, सिर घुटाकर, मुँह पर कालिख पोत कर उसको गन्धे पर चढ़ा शहर में फिरवाया। फिर उसने कहा-"यह ही तुम्हारे सरदार के लिए मेरा जवाब है।"

उसकी पीठ पर बकरी की छाल पर एक चित्र बनवा कर ठुकवा दिया गया। चित्र

में एक जङ्गली को नरवाहन के सैनिक जञ्जीर बाँधकर ले जा रहे थे।

जङ्गली बृद्ध सरदार ने उस चित्र का मतलब समझ लिया। उसने मेरी तरफ मुड़कर कहा-"इसका मतलब यह हुआ कि या तो हमें मरना पड़ेगा नहीं तो गुलाम बनकर रहना होगा। अगर इन दोनों में से मुझे एक को चुनना पड़ा तो मैं मरना ही पसन्द करूँगा।"

भले ही परिस्थितियों मेरे अनुकूल न बन रही हो; पर वे नरवाहन के प्रतिकूल होती जा रही थीं, इतना मैं साफ साफ समझ पाया। नरवाहन इस ख्याल में आराम से बैठा था कि कुण्डलिनी द्वीप में उसका मुकाबला करनेवाला ही कोई न था।

वृद्ध जङ्गली सरदार ने मेरी तरफ देखते हुए कहा-"देख लिया न तुमने नरवाहन की धौंस और धाँधली। उसकी नज़र में हम आदमी ही नहीं हैं। हम कोई हिजड़े नहीं है कि उसके नीचे गुलाम की तरह जियें।

"इसका मतलब यह हुआ कि आप लोग युद्ध के लिए तैयार हैं?" मैने पूछा।

एक क्षण बूढ़ा सरदार नीचे मुँह किये चुप रहा। फिर कुछ सोचता हुआ कहने लगा-"और कोई दूसरा रास्ता मुझे दिखाई नहीं देता। जैसे आपने पहले कहा भी था, उसके सुसज्जित सैनिकों का मुकाबला करना मुश्किल है। खतरनाक भी है। इसलिये भला शायद इसी में है कि हम उसकी सेना पर लुके-छुपे हमला करें।"

पर उस तरह हमला करने से विजय न होगी। किसी न किसी दिन आपको कुण्डलिनी नगर और राजमहल को अपने कब्जे में करना ही पड़ेगा।" मैने कहा।

बूढ़े को यह बात समझ में आ गई। उसने सिर हिलाया। इतने में दो तीन जङ्गली नवयुवक, जहाँ हम खड़े थे, वहाँ चिल्लाते हुए आये। वृद्ध को नमस्कार करके उन्होंने कहा- "मालूम होता है कि शत्रु बड़ी सेना के साथ हम पर आक्रमण करने आ रहे हैं। घुड़सवार और पदातियों के अलावा, हाथियों पर भी वे चले आ रहे हैं। बताइये, अब क्या किया जाय?"

बूढ़े ने निश्चिन्त होकर कहा-"हम उतनी बड़ी सेना का मुक़ाबला करने नहीं आ रहे हैं। परन्तु जब मौका मिले उन पर हमला कर उनको तङ्ग कर दो।

"क्या हम हिंस्र जन्तुओं का उपयोग कर सकते हैं?" एक नवयुवक ने पूछा।

"हाँ! हाँ ! ज़रूर...." वृद्ध सरदार ने कहा-"विष-बाण, विष-सर्प; जो कुछ मिले उनसे शत्रुओं को दिक कर दो।"

यह आज्ञा सुन वे नवयुवक चले गये। मैं यह न जान सका कि शत्रु को शेर, और साँपों से कैसे तङ्ग किया जा सकता था। विष-बाणों के बारे में मैं जानता था। जङ्गलों में रहनेवाले आदिम जाति के लोग अक्सर इनका उपयोग करते थे।

"शिवदत्त! मैं आपको एक गुप्त स्थान पर ले जाऊँगा। आपके सैनिक भी आपके साथ

बेफिक्र आ सकते हैं।" सरदार ने कहा।

बह गुप्त स्थान कहाँ था, और वहाँ जाने की इस समय क्या जरूरत थी, यह सब मैं न जान सका। वृद्ध ने मेरी तरफ देखते हुए कहा-"आप लोगों के लिये जैसे किले-खाई वगैरह होती हैं, वैसे हमने भी शत्रु से बचने के लिये अपने ढङ्ग से कहीं कहीं प्रबन्ध कर रखे हैं। मैं जिस जगह पर ले जा रहा हूँ, उसके बारे में हम लोगों में भी कम को ही मालूम है।

वह कई सालों पुराना, पहाड़ पर बना एक किले का खण्डहर है। नरवाहन के विरुद्ध युद्ध हम वही से चलायेंगे।

जब वृद्ध ने सब कुछ बता दिया तो उसके बाद मैंने उससे कुछ पूछना न चाहा। मैं अपने सिपाहियों को लेकर निकल पड़ा। जङ्गली सरदार के साथ कुछ नवयुवक थे। सब मिलकर घने जङ्गल की ओर चल पड़े। हम जिस रास्ते से जा रहे थे, उस रास्ते पर कई जङ्गलियों के गाँव थे। हर गाँव में युद्ध की तैयारियाँ हो रही थी, सब जगह खलबली मची हुई थी।

किसी किसी गाँव में, कुछ जङ्गली नवयुवक पाँच-छः शेरों को गले में रस्सी बाँधकर झोपड़ियों में से बाहर ला रहे थे। शेरों को शायद बहुत दिनों से पकड़ कर रखा गया था। वे पालतू कुत्तों की नरह उनके पीछे चलते जाते थे।

"शिवदत्त! हम इन्ही शेरों को नरवाहन के सैनिकों के विरुद्ध छोड़ने जा रहे हैं। ये शेर सौ सौ वीर सैनिकों के बराबर हैं। यह आपको जल्दी ही मालूम हो जायेगा। नरवाहन के हाथियों को तहस नहस करने के लिये, हमारे पास

शेर हैं, और उसके सिपाहियों का मुकाबला करने के लिये हमारे पास हथियार भी हैं।" उस वृद्ध सरदार ने कहा।

तब मै जङ्गलियों की बहादुरी और वीरता की प्रशंसा किये बगैर न रह सका। बुद्ध सरदार को इस विषय में इतना विश्वास था कि मुझे आश्चर्य होता था। मैं जानता था कि पालतू जानवरों और विष-बाणों से एक सुसज्जित, सशस्त्र सेना को जीतना आसान काम न था।

वृद्ध कुछ सोचता सोचता आगे बढ़ता जाता था। छोटे-मोटे टीलों, गढ़ों, झाड़ी झंखाड़ों को पार करते हुए हम घने जङ्गल में आगे चलते जाते थे। एक जगह दस-ग्यारह जङ्गली छोटी छोटी टोकरियों से, किसी चीज़ को बड़े बड़े टोकरे में रख रहे थे। वे जिस होशियारी से यह काम कर रहे थे, वह देखकर मैं चकित था।

"उस बड़े टोकरे में वे क्या रख रहे है?" मैंने वृद्ध सरदार से पूछा।

"साँप; जहरीले साँप।" उसने कहा- "आप जल्दी ही देख लेंगे कि इनका भी उपयोग कैसे होता है।"

चलते चलते हम एक पहाड़ी प्रदेश में पहुँचे। बड़े पहाड़ की सूचना-सी देते हुए बड़े बड़े वृक्ष सामने दिखाई देने लगे। वृद्ध सरदार ने वहाँ रुककर मुझसे यों कहा:

"इस द्वीप में बहुत से लोग यह नहीं जानते कि हमारे सामने एक ऊँचा पहाड़ है और उस पहाड़ पर एक किले का खण्ड़हर है। क्योंकि वह खण्ड़इर, पेड़-पत्तों से खूब ढका हुआ है, इसलिये हमारी आँखों को आसानी से नहीं दिखाई देता। हम जैसे लोगों को ही, जो यहाँ घूमते-फिरते हैं, इसके बारे में कुछ मालूम है।"

मैं सिर हिलाकर खड़ा रहा। मुझे ऐसा लगा कि अगर इस घने जङ्गल में कोई मज़बूत किला हो तो वहाँ से नरवाहन का मुक़ाबला करना बहुत आसान था। दो-तीन बहादुर अगर मिल जायें तो नरवाहन को खूब तङ्ग किया जा सकता था।

"क्या किला एकदम टूट-फूट गया है?" मैंने वृद्ध से पूछा।

यह तो नहीं कह सकता कि बहुत टूट-फूट गया है। पर इतना जरूर कहा जा सकता है कि वह अब खण्डहर-सा है। अगर हम एक बार

उसमें जा बैठें वो शत्रु पैदल तो आ सकता है; पर घोड़ों और हाथियों पर सवार होकर नहीं आ सकता। अगर कहीं शत्रुओं का झुण्ड़ नज़दीक भी आ गया तो उन पर पत्थर लुढ़का कर, उनको मारा जा सकता है। पेड़ों पर चढ़, उन पर विष-बाण छोड़ उनका खातमा किया जा सकता है।" वृद्ध ने कहा।

वृद्ध की बातें सुनकर मुझे बड़ा सन्तोष हुआ। भले ही अन्तिम विजय नरवाहन की हो, पर इस बीच में उसको खूब तङ्ग किया जा सकता था; उसकी सेना को नष्ट किया जा सकता था। और अगर यही

मौका देख शहरवालों ने भी उसके अत्याचारों के विरुद्ध विद्रोह शुरू कर दिया तो उसका पतन अवश्यम्भावी है।

हम धीमे धीमे पहाड़ पर चढ़ने लगे। वह जगह सुनसान थी। लोग आते-जाते न थे। इसलिये कहीं चलने के लिए ठीक रास्ता भी न था। हमारे आगे जानेवाले जङ्गली नवयुवक, तलवार, कटारों से पेड़ काटकर हमारे लिये रास्ता बनाते जाते थे। यहाँ हिंस जन्तु भी इधर उधर घूम-फिर रहे थे। चीते, हमें देखकर अपने अपने रास्ते पर चलते जाते थे। पेड़ों पर से मुझे अजगर भी लटकते दिखाई दिये। ठीक दुपहर को हम चलते चलते पहाड़ की चोटी पर किले के खण्डहर के पास पहुँचे। मुझे वहाँ पहुँचकर ही मालूम हुआ कि वह बहुत ऊँचा पहाड़ था। स्वण्डरों की दीवारों से, सम्पूर्ण कुण्डलिनी द्वीप और उसको घेरा हुआ समुद्र साफ साफ दीख पड़ता था।

"क्या यहाँ से नरवाहन का मुकाबला किया जा सकता है?" सोचते हुए मैं किला देखने लगा।

वहाँ बिखरे पड़े हुए बड़े बड़े स्तम्भ पत्थर यह बता रहे थे कि एक समय यह किला बहुत ही मजबूत रहा होगा। किले के मुख्य द्वार के दरवाजे बुरी हालत में थे और गिरने को तैयार थे।

"शिवदत्त! अगर आप किले को देखना चाहें तो मैं आपके साथ एक अपना आदमी भेज सकता हूँ।" वृद्ध सरदार ने कहा। इतने में हमें भयङ्कर शोर और हाथियों का चीत्कार सुनाई देने लगा। "यह क्या है?" पूछता हुआ, आश्चर्य से जङ्गली युवकों की ओर वह देखने लगा।

(अभी और है)

कठिनाई

ब्रह्मदत्त जब काशी का राजा था, तब बोधिसत्व, एक ब्राह्मण घराने में पैदा हुए। उनका नाम सोमदत्त था। उनका पिता बहुत ही गरीब था। थोड़ी बहुत ज़मीन थी। उसी में खेती-बाड़ी कर लेते थे। पर मुश्किल से गुज़ारा होता था।

सोमदत्त जब बड़ा हुआ, तो अपने पिता को कुटुम्ब पोषण के लिये कष्ट उठाते देख उसे बड़ा दुःख हुआ। माँ-बाप की सहायता करने के लिये उसे एक ही एक रास्ता दिखाई दिया। वह यह था कि कहीं विद्या सीख कर किसी की नौकरी की जाय। एक दिन सोमदत्त ने अपने पिता से कहा-"मैं तक्षशिला जाकर कोई विद्या सीखना चाहता हूँ।" पिता भी इसके लिये मान गये।

तक्षशिला जाकर एक गुरु की सेवा-शुश्रूषा कर, विद्या सीखकर सोमदत्त अपने गाँव आ गया। उसका पिता हमेशा की तरह एक जोड़ी बैल से उसी आधे बीघे ज़मीन में खेती कर रहा था। उनको अब भी पहले जैसी तङ्गी थी। सोमदत्त अगले दिन ही काशी गया और वहाँ के राजा की नौकरी में लग गया।

थोड़े दिनों बाद पिता का एक बैल अचानक मर गया। कितनों ही वर्षों से वह बैल उनकी सेवा कर रहा था और वे बैलों की सेवा कर रहे थे। बैल के मर जाने पर सोमदत्त के पिता को ऐसा लगा, जैसे उनके एक हाथ को लकवा मार गया हो। यह सोच कि उसका लड़का राजा की नौकरी कर रहा है, क्या वह राजा से एक बैल भी न माँग सकेगा? सोमदत्त के पिता काशी गये।

सब सुनने के बाद सोमदत्त ने पिता से कहा -"अब आप दोनों की उम्र काफी

हो गई है। क्यों उस थोड़ी-सी जमीन के लिये खून पसीना एक करते हैं? आप भी मेरे पास आकर रहिये।"

पिता को पुत्र की बात न जँची। उसने कहा-"मैं मरूँगा तो उसी गाँव में मरूँगा। मैं उसे छोड़कर नहीं आ सकता। अगर तुमने मुझे एक और बैल दिलवा दिया, तो खेती करता आराम से रहूँगा। जो आराम उसमें है, वह यहाँ कहाँ मिलेगा?"

सोमदत्त को नौकरी में लगे थोड़े दिन ही हुए थे। उनके पास इतना धन न था कि बैल खरीद पाते। राजा से माँगना अच्छा न था। राजा को शायद बुरा लगे कि आये अभी दस दिन भी न हुए कि हाथ पसार रहा है। इसलिये उसने पिता से कहा-"अगर मैं राजा से बैल माँगता हूँ तो वे पूछेंगे-"तुम्हें बैल से क्या काम? किसके लिये माँग रहे हो?" फिर एक मुझ जैसे नौकर के लिये इस तरह माँगना भी अच्छा नहीं है। आपके लिये ऐसी कोई दिक्कत नहीं है। आप सीधे जाकर माँग सकते हैं। सारी कहानी सुना कर कहना कि कृपया एक बैल दिलवा दें। राजा जरूर देंगे। इसमें कोई ख़राबी भी नहीं है।"

पर पिता को यह सुझाब पसन्द न आया। उसने कहा-"बेटा! में गाँव का रहनेवाला हूँ। उम्र भी हो गई है। सिवाय हल चलाने के में कुछ जानता भी नहीं हूँ। कहाँ राजा, कहाँ उनका दरबार और कहाँ मैं? दरबार में घुसते ही हो सकता है कि मेरे मुख से बात भी न निकले। मैं क्या जानूँ कि राजा से कैसे बातचीत की जाती है? जैसे तैसे तुम ही मेरा काम कर दो।"

इन सब दिक्कतों का में एक इलाज बताता हूँ। मैं एक श्लोक लिखकर देता हूँ। उसे घोट- घाटकर दो-तीन दिन बाद राजा के पास जाइये। उनको नमस्कार कर श्लोक सुनाइये। आपका काम बन जायगा।" सोमदत्त ने अपने पिता को समझाया। बाद में उसने यह श्लोक लिखकर पिता से कण्ठस्थ करवाया

"द्वे में गोणा महाराज,

गे हि खेतं कसामसे।

तेसु एको मतो देव

दुतियं देहि खत्तिय।"

इसका मतलब यों है:"महाराज! मेरे पास एक जोड़ी बैल था। उनके

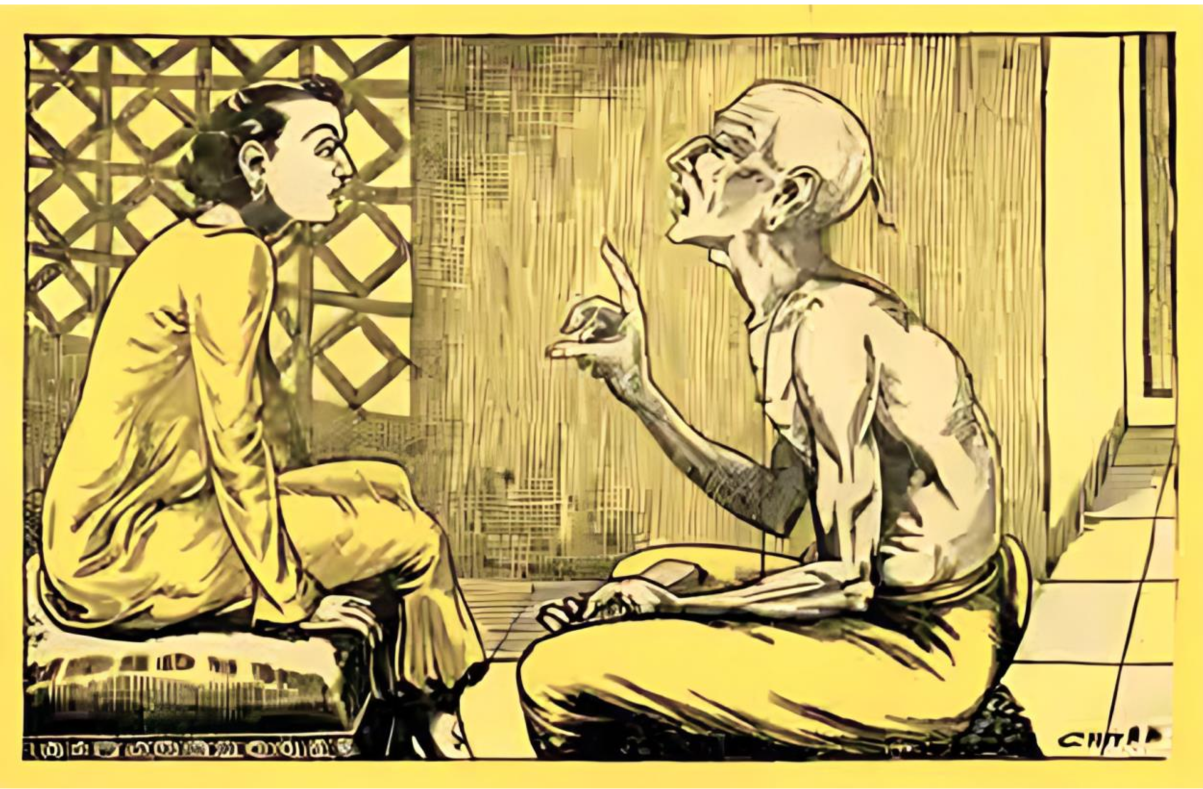

सहारे खेती कर लिया करता था। अब उनमें से एक मर गया है। मुझे दूसरा दिलवाइये।"

बूढ़े ने बहुत मेहनत से इस श्लोक को कण्ठस्थ किया। फिर सोमदत्त पिता को अपने साथ दरवार में ले गया। पुत्र की सलाह के अनुसार वह राजा, मन्त्री, सामन्तों को नमस्कार कर खड़ा हो गया।

"आप कौन हैं? क्या चाहिए?" राजा ने पूछा। तुरन्त बूढ़े ने रटा-रटाया श्लोक पढ़ दिया। परन्तु घबारहट में श्लोक बदल गया था। वह यूँ हो गया था

"द्वे में गोणा महाराज,
ये हि खेतं कसामसे।
तेसु एको मतो देव
दुतियं मण्ह खत्तिय।"

सब दरबारी हँसे। सोमदत्त ने सिर झुका लिया। क्योंकि उसके पिता ने यह कहने के बदले कि "मुझे दूसरा बैल दिलवाइये " यह कह दिया था कि " मेरा दूसरा बैल ले लीजिये।"

"क्या तुम मुझे अपना बैल देने के लिये ही इतनी दूर आये हो?" राजा ने हँसते हुए पूछा।

"महाराज! अगर आप चाहते हैं तो उसे ले लीजिये, उसी के कारण यह नौबत आई है।" कहते हुए सोमदत्त के पिता ने अपनी सारी कहानी राजा को सुना दी।

सोमदत्त के व्यवहार को देख राजा बहुत प्रसन्न हुआ। उसकी नौकरी में सब ऐसे थे, जो बात बात पर उसकी सहायता चाहते थे। सोमदत ने कभी कुछ न माँगा था। राजा ने आठ जोड़ी बैल खूब सजा-धजाकर सोमदत्त के पिता को भेंट में दे दिये। वह बहुत ही खुश हो गया।

कन्नौज के राजा तालध्वज के तीन लड़के थे। उनका नाम पुण्यकेतु, चित्रभानु और पिङ्गल था। पिता को बिना बताये वे दक्षिण देश देखने घर से निकल पड़े। थोड़े दिनों बाद वे स्त्री राज्य में पहुँचे। उस राज्य की रानी का नाम मुकुटरत्ना था।

उन्होंने एक मकान किराये पर लिया। वे तीनों शहर देखने अलग अलग रास्तों से गये। पिङ्गल को एक गली में एक विशाल मकान दिखाई दिया। उस घर के सामने एक सुन्दर स्त्री का चित्र लटक रहा था। उसमें यों लिखा था-"यह चित्र अच्छे घराने की राजमणि नामक कन्या का है। अगर कोई विद्वान नवयुवक, उसके सङ्केतों का अर्थ समझ सके तो उससे विबाह कर सकता है। और अगर कोई न बता सका तो उसको माली का काम करना होगा। जो यह शर्त मानने को तैयार हों, वे ही घण्टा बजायें।"

राजमणि का चित्र देखते ही पिङ्गल को उससे विवाह करने की इच्छा हुई। उसने जाकर घण्टा बजाया। तुरत दो दासियाँ आई और उसको एक कमरे में बिठाकर चली गईं। थोड़ी देर बाद, उन्होंने एक तश्तरी में नये नये मुलायम पत्ते लाकर दिखाये और पूछा-"इसका अर्थ बताइये, हम अपनी मालकिन से जाकर कह देंगी।" पिङ्गल ने बहुत देर माथापच्ची की, पर वह उस सङ्केत का मतलब न जान सका।

पिङ्गल को आखिर हार माननी पड़ी। तुरन्त सिपाही आये, और उसके आभूषण आदि उतारकर, उसको बाग़ में काम कराने के लिए ले गये।

श्री बल्लभदास परमार

जब पुष्पकेतु घर पहुँचा तो दोनों भाई वापस न आये थे। अगले दिन सवेरे वह उनको ढूँढने निकला। वह भी उस मकान के पास पहुँचा, जहाँ राजमणि का चित्र टँगा था। अब उसने वहाँ खड़े सिपाहियों से पूछताछ की तो उन्होने बताया कि कल ठीक उसकी शक्ल वाला वहाँ एक आया था और वह अब बाग़ में काम कर रहा है। पुष्पकेतु को विश्वास हो गया कि वह व्यक्ति उसका भाई ही होगा। उसे अब जैसे तैसे राजमणि को हराकर भाई को छुड़ाना था। अब दूसरा उपाय नहीं है।

परन्तु पुष्यकेतु ने घण्टी नहीं बजाई। वहाँ के सब से बड़े पण्डित के पास वह गया। उसने पण्डित से कहा- "सुना है कि आपके पास कुछ ऐसे ग्रन्थ हैं जो और जगह नहीं मिलते हैं।

क्या मैं वे ग्रन्थ एक बार देख सकता हूँ?" पण्डित ने अपने ग्रन्थ पुष्पकेतु को दिखा दिये। उनमें एक ही ऐसा अन्थ था, जिसको पुष्पकेतु ने नहीं पढ़ा था। उस पुस्तक का नाम था "नागर सर्वस्व" जिसको "पद्म श्री" नाम के एक बौद्ध सन्यासी ने लिखा था। उसमें उसने सङ्केतों पर लिखा अध्याय, चार पाँच बार पड़ा। पण्डित से आज्ञा लेकर, वह राजमणि के घर गया और वहाँ उसने घण्टी बजाई।

दासियाँ उसको सादर एक कमरे में बिठाकर चली गई। एक तश्तरी में नये नये पत्ते लाकर उन्होंने पुष्पकेतु के सामने रखे। उन्हें देखते ही पुष्पकेतु को याद आया "कुलपांकुर स्मृतः" वह जान गया कि राजमणि उसके कुल के बारे में पूछ रही थी। उसने जवाब भिजवाया कि "मैं क्षत्रिय हूँ।" इसके बाद सङ्केत के रूप में कई और सन्देश भी भेजे गये। सब का पुष्पकेतु ने सही उत्तर दिये।

आखिर दासियों ने आकर कहा- "हमारी मालकिन आपको देखना चाहती हैं।"

पुष्पकेतु को एक विचित्र कमरे में प्रविष्ट कराया गया। सोने के सिंहासन पर एक स्त्री बैठी हुई थी। उसने उसका स्वागत किया। "मैं विवाह करने के लिये तैयार हूँ।" उस स्त्री ने कहा। पर, पुष्नकेतु को सन्देह हो रहा था कि वह राजमणि है कि नहीं।

"क्या आपने प्रश्न भेजे थे? आप तो राजमणि नहीं हैं?" उसने पूछा।

"में राजमणि तो नहीं हूँ, पर प्रश्न मैंने ही भेजे थे। मैं इस देश की रानी हूँ। मेरा नाम मुकटरत्ना है। राजमणि मेरी एक सहेली है। कहीं ऐसा न हो कि प्रजा को ख़बर हो जाय कि मैं पति की खोज में हूँ, मैं सहेली के नाम पर यह काम कर रही थी।" उस ने कहा।

"इसमें मेरी तो कोई हानि नहीं हैं; पर कल मेरा भाई आपसे हारकर आपके बाग़ में काम कर रहा है। उसे तुरन्त छुड़वा दीजिये।" पुष्पकेतु ने कहा।

मुकुटरत्ना ने हँसकर कहा-"वह आपका भाई है? राजमणि ने उससे

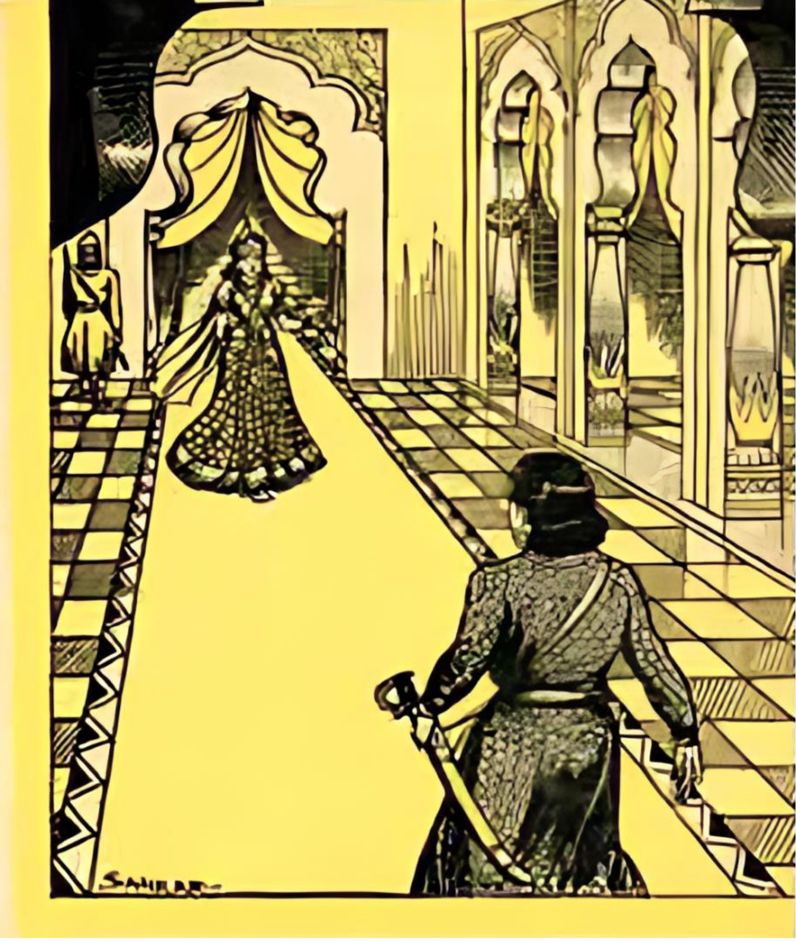

विवाह करने की ठान ली है। हम दोनों का एक साथ ही विवाह होगा।"

और इधर, चित्रभानु को भी एक अजीब अनुभव हुआ।

उस नगर में मणिमन्त नाम का कोई करोड़पति व्यापारी रहता था। उसकी इकलौती लड़की का नाम उर्मिला था। वह बड़े लाड़-प्यार से पाली गई थी। पिता करोड़पति था और लड़की थी, तिलोत्तमा सी सुन्दरी। उसके लिये उपयुक्त वर ढूँढ़ने के लिये मणिमन्त ने लाखों रुपये खर्च किये। आखिर, शुकद्वीप में रहनेवाले

रत्नपाद के लड़के के साथ उसका विवाह निश्चित किया गया। क्योंकि बारातियों को बहुत दूर से समुद्र पार करके आना था, इसलिये यह तय हुआ कि छः महीने बाद विवाह हो। निमन्त्रण पत्र भेजे गये। वर पक्ष बालों को यह भी खबर भिजवाई गई कि यदि विवाह तब न हुआ तो अगले तीन वर्ष तक न हो सकेगा।

विवाह की धूमधाम से तैयारियाँ हुई। मणिमन्त ने उर्मिला के विवाह पर एक करोड़ रुपये खर्च करने की सोच रखी थी।

विवाह का दिन आया। निमन्त्रित अतिथि हज़ारों की संख्या में पण्डाल में उपस्थित हुए। परन्तु बरातियों का कहीं पता न था। अभी मुहूर्त में दो-तीन घण्टे थे कि मणिमन्त के नौकरों ने आकर बताया कि ख़बर मिली है कि बरातियों के जहाज, समुद्र में चट्टानों से टकराकर चकनाचूर हो गये हैं।

मणिमन्त को काटो तो खून नहीं। हजारों आदमियों को बुलाया था। इतना रुपया खर्च किया था, अब शादी कैसे रोकी जाय? वह निमन्त्रित सज्जनों में जाकर इधर उधर देखने लगा। उसकी नज़र चित्रभानु पर पड़ी। उसने उसको अलग ले जाकर सब बता दिया- "बेटा! मेरी लड़की से शादी करके मेरी इज्जत बचाओ। मेरे पास दस करोड़ रुपये हैं। एक ही एक लड़की है, और सौन्दर्य में किसी से कम नहीं है।" चित्रमानु ने भी बताया कि वह एक राजा का लड़का था। वह उर्मिला से विवाह करने के लिये मान गया। विवाह भी हो गया।

विवाह के सातवें दिन दस हज़ार असली बराती आये। मणिमन्त का माथा

ठनका। उसने रत्नपाद के पास जाकर सारा किस्सा सुनाया। "मुझे यह खबर मिली थी कि आप लोगों के जहाज डूब गये हैं। इसलिये मैंने ठीक मुहूर्त में अपनी लड़की की किसी और से शादी कर दी।"

"यह जरूर सही है कि समुद्र में, पहाड़ों से टकराकर, जहाजों की पेन्दी में छेद हो गये थे। प्राण बचाने के लिये, भारी, चीजे हमने समुद्र में फेंक दीं, जैसे तैसे छेदों को भरकर, सही सलामत हम पहुँचे हैं। और अब तुम हमारा यों अपमान करते हो?" रत्नपाद ने डाँटा-डपटा।

"मुहूर्त के बाद आने से क्या फायदा?" मणिमन्त ने पूछा।

"क्या विवाह के लिये कोई मुहूर्त होता है? जब विवाह हो, तभी मुहूर्त है।" रत्नपाद ने कहा।

यह सुनते ही मणिमन्त अपने को काबू में न रख सका। दोनों खूब आपस में झगड़ने लगे। "देख! मैं तेरा क्या करता हूँ?" रत्नपाद ने डराया। उस आदमी से बात करना बेकार है, यह सोचकर मणिमन्त घर वापिस चला आया। पर उसे भय

सता रहा था। जब चित्रभानु को मालूम हुआ कि उसके ससुर इस तरह डर रहे हैं, उसने अपने ससुर से कहा-

"रत्नपाद शायद इस भरोसे में है कि यह स्त्रियों का राज्य है, और चाहे वह कुछ भी करे, उसे कोई पूछनेवाला नहीं है। जब तक मैं हूँ, आप न घबरायें। मैं सब देख लूँगा।"

रत्नपाद के आदमी, लाठी, डण्डे लेकर मणिमन्त के घर पर टूट पड़े। मणिमन्त घबरा गया। पर चित्रमानु कटार लेकर आगे लपका, और जो कोई आगे बढ़ा,

उसे साफ़ करता गया। कुछ तो उसकी तलवार के शिकार हुए, कुछ घायल हुए, और बाकी डर-डराकर भाग गये।

पर रत्नपाद को तब भी अक्ल न आई। उसने राजमहल में जाकर मणिमन्त के खिलाफ शिकायत की। मुकुटरत्ना सिंहासन पर बैठी थी और पुष्पकेतु भी उसकी बगल में बैठा था। रत्नपाद और मणिमन्त की शिकायतें सुनकर, रानी कुछ निर्णय न कर पाई। उसने पति से कहा-"आप ही इसका फैसला कीजिये।" पुष्पकेतु ने मणिमन्त के दामाद के लिये आदमी भेजे। उन्होंने वापिस आकर कहा-"महाप्रभु ! वे आने से इनकार कर रहे हैं।"

पुष्पकेतु यह जवाब सुनकर आग बबूला हो गया। पिङ्गल और कुछ सैनिकों को लेकर वह मणिमन्त के घर गया। यह सोचकर कि उसको पकड़ने के लिये सेना भेजी गई है, चित्रभानु तलवार लेकर बाहर जा खड़ा हुआ। पर वे जब पास आये तो आपस में एक दूसरे को पहचान कर बड़े आश्चर्य चकित हुए।

"चित्रभानू! हम दोनों का विवाह हो गया है। तेरी भी शादी हो गई होगी, इसका हमें स्वप्न में भी ख्याल न था।" पुष्पकेतु ने कहा।

चित्रभानु भी उनके साथ राजमहल गया। पुष्पकेतु ने रत्नपाद की शिकायत का यों फ़ैसला किया- "यद्यपि कसूर उसी का था, पर चूंकि वह इसके पहले ही बहुत नुकसान उठा चुका था, इसलिये उसको और सजा नहीं दी जा सकती।" मणिमन्त से उसको हरजाना दिलवाकर उसे भेज दिया गया।

एक बार किसी राजा को ये प्रश्न सताने लगे कि कोई काम कब प्रारम्भ करना चाहिये? उसके लिए किसकी सलाह लेनी चाहिये? इस बारे में उत्तम धर्म क्या है? इसलिये राजा ने घोषणा करवाई कि जो कोई इन तीन प्रश्नों का उत्तर देगा, उसको बहुत ईनाम मिलेगा।

घोषणा सुन बहुत-से ज्ञानी राजा के पास आये। परन्तु वे राजा के प्रश्नों का ठीक तरह जवाब न दे सके।

पहले प्रश्न का, कई ने बताया कि पञ्चाङ्ग टटोलने पर उत्तर मिल सकता है। कई ने कहा कि काम के अनुसार अनुकूल समय भी बदलता है। कई और ने कहा कि कार्य समय की परवाह न कर आगे-पीछे कर लेना चाहिये। कहने का मतलब यह कि जो जिसको सूझा वह उसने कह दिया।

दूसरे प्रश्न का सलाह किसकी लेनी चाहिये? कई ने उत्तर दिया कि मन्त्री की सलाह लेनी चाहिये। किसी ने कहा कि अच्छे ब्राह्मणों से परामर्श करना चाहिये। और कई ने कहा कि सामन्तों की सलाह ली जानी चाहिये।

"उत्तम धर्म क्या है?" इसके जवाब में बताया गया कि शास्त्रों का ज्ञान पाना उत्तम धर्म है। कई की यह राय थी कि व्रत, पूजा-पाठ करना काफी है। कुछ का कहना था कि युद्ध उत्तम धर्म है।

पर राजा को एक का भी उत्तर पसन्द न आया। उसने ईनाम भी किसी को न दिया। पास के वन में एक ऋषि रहा करते थे। राजा ने सोचा कि उनसे मिलने पर वे सन्देह निवारण कर सकते हैं।

टॉलस्टॉय के कहानी के आधार पर

परन्तु वह महर्षि अपना आश्रम छोड़कर कहीं आता-जाता न था और सिवाय मामूली आदमियों के किसी से मिलता-जुलता न था। इसलिये राजा मामूली वेश धारण कर, दो चार नौकर ले घोड़े पर सवार हो आश्रम गया। आश्रम के बाहर ही वह घोड़े पर से उतरा, नौकर-चाकरों को वहीं खड़े रहने को कह, वह स्वयं पैदल महर्षि की कुटीर की ओर गया।

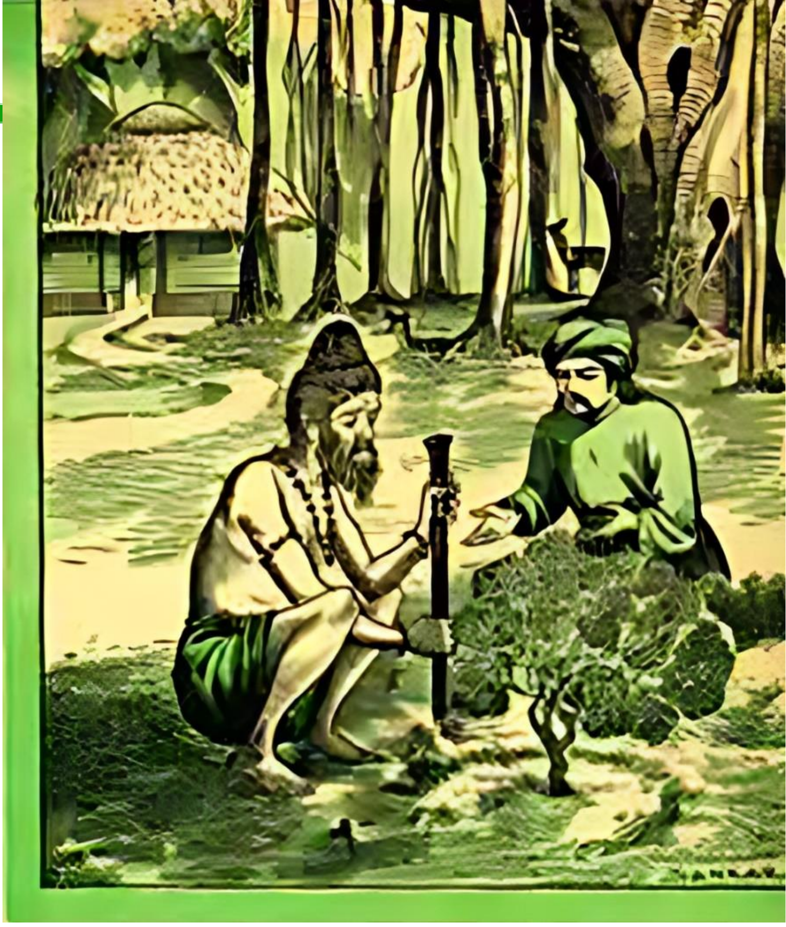

महर्षि कुटीर के सामने पौधे लगाने के लिए क्यारियाँ बना रहे थे। राजा का नमस्कार स्वीकारकर, वे यथापूर्व क्यारियाँ बनाते गये।

राजा ने उनसे कहा-"स्वामी, मैं आपसे अपने तीन सन्देहों का निवारण करवाने आया हूँ।" कोई काम कब आरम्भ करना चाहिये? किसकी सलाह लेनी चाहिये? उत्तम धर्म क्या है?"

महर्षि ने थोड़ी देर के लिए जमीन ने खोदना बन्द किया और राजा के प्रश्न सुने। फिर बिना कुछ कहे जमीन ठीक करने लगे। महर्षि बूढ़े थे। तपस्या आदि के कारण बहुत दुर्बल हो गये थे। राजा ने उनसे कहा-"आप आराम कीजिये। मैं ज़मीन खोद दूँगा।" खुरपा राजा को देकर महर्षि जमीन पर लेट गये।

चार क्यारियाँ बनाकर राजा ने महर्षि के सामने फिर अपने सन्देह प्रकट किये। पर महर्षि ने बिना कुछ जवाब दिये, राजा के हाथ से खुरपा लेना चाहा। परन्तु राजा ने खुरपा नहीं दिया। सूर्यास्त समय तक राजा स्वयं क्यारियाँ बनाता रहा। काम पूरा हो गया। राजा ने खुरपा नीचे रख कर कहा-"स्वामी! मैं इसलिये आया था कि आप ज्ञानी हैं, और मेरा सन्देह दूर कर देंगे। अगर आप उनके उत्तर न

जानते हो तो साफ कह दीजिये, मैं अपने रास्ते चला जाऊँगा।"

"कोई आता मालूम होता है। देखें क्या बात है।" महर्षि ने कहा। राजा ने पीछे मुड़कर देखा तो कोई व्यक्ति आश्रम की ओर आ रहा था। वह अपने हाथों से पेट दबाये हुआ था। उसके को कुटी में ले गये। बिस्तरे पर लाते ही अंगुलियों में से खून बह रहा था। वह राजा तक कराहता आया और फिर बेहोश गिर गया। जब महर्षि और राजा ने उसके कपड़े उतारकर देखा तो उसके पेट पर बड़ा घाव था। राजा ने जब उसका घाव धोकर साफ किया तो खून आना बन्द हो गया। उसको होश भी आ गया। उसने पीने के लिए कुछ माँगा। राजा ने कुटीर में से पानी लाकर उसे पिलवाया।

इतने में अन्धेरा हो गया। राजा और महर्षि दोनों मिलकर पायल व्यक्ति को कुटीर में ले गए। बिस्तर पर लाते ही उस आदमी ने आँखें मूँद लीं। राजा भी क्यारीयाँ खोदने के कारण सूब थक गया था। इसलिये वह भी जमीन पर वहीं सो गया। खूब नींद आई। सवेरे जब वह उठा, तो वह यह न जान सका

कि वह कहाँ था। पर बिस्तर पर पड़ा व्यक्ति एक नज़र से निरन्तर उसी की ओर देख रहा था।

राजा को नींद से उठा देख उस व्यक्ति ने कहा-"महाराज! मुझे क्षमा कीजिये।"

"तुम कौन हो, यह भी मैं नहीं जानता। फिर क्या क्षमा करूँ?" राजा ने पूछा।

"आप तो नहीं जानते कि मैं कौन हूँ, पर मैं जानता हूँ कि आप कौन हैं? आपने कभी मेरे भाई को फाँसी चढ़ाकर उसकी सम्पति हड़प ली थी। तब मैंने शपथ ली थी कि मैं आपको मार कर अपने भाई का बदला लूँगा। मैं आपका शत्रु हूँ। यह जानकर कि आप महर्षि को देखने के लिये आश्रम गये हैं, आपको वापस जाते समय मारने के उद्देश्य से मैं एक झाड़ी में छुपा हुआ था। पर आप बहुत देर तक न आये और मैं आपकी तालाश में निकला। इस बीच में आपके अङ्ग-रक्षकों ने मुझे देख लिया और घायल कर दिया। मैं जैसे तैसे भाग निकल आया। अगर आप मेरे घाव को धो धाकर मरहम पट्टी न करते, तो इतना खून बह जाता कि मैं मर जाता। मैंने आपको मारने की सोची थी

और आपने मुझे मरने से बचाया। अगर मुझे आप जीने दें, तो मैं और मेरे लड़के आपकी जिन्दगी भर सेवा करेंगे।" उस व्यक्ति ने कहा।

इतनी आसानी से शत्रु से समझौता हो जाने पर राजा ने सोचा कि राज-वैद्य से उसकी चिकित्सा करवायेगा और उसके भाई की सम्पत्ति भी उसको वापिस कर देगा। राजा जब कुटीर से बाहर निकला तो महाषि पौधे लगा रहे थे। राजा ने उनके पास जाकर नमस्कार करके कहा-"स्वामी! आपने मेरे सन्देह पूरे नहीं किये।"

महर्षि ने हँसकर कहा-"तुम्हारे सन्देह सब पूरे हो चुके हैं। तुम्हें समझ में नहीं आया? कल तुम मेरी दुर्बलता देखकर क्यारियाँ बनाने लगे। अगर तुम बाहर चले जाते तो तुम्हें यह आदमी मार देता। मतलब यह हुआ कि उस समय तुम्हारे लिये प्रधान व्यक्ति मैं था, और कार्य क्यारियाँ बनाना। मेरी सहायता करना ही तुम्हारा प्रधान धर्म था। परन्तु थोड़ी देर बाद यह घायल आदमी भागता आया । तुमने सुसमय में उसकी सेवा की। वह तुम्हारे लिये प्रधान व्यक्ति था, उसकी सहायता करना तुम्हारा धर्म था। इसलिये याद रखो वर्तमान समय ही मुसमय है; क्योंकि उसी समय हमारे आधीन शक्ति होती है। तुम्हारे लिये वही मुख्य व्यक्ति है, जो तुम्हारे साथ है। क्योंकि कौन कह सकता है कि दूसरे किसी व्यक्ति से हमारा सम्बन्ध होगा कि नहीं; होगा तो कैसे होगा, इसलिए हमारा प्रधान धर्म उसकी सहायता करना है। क्योंकि उसी कार्य के लिये हमने यह जन्म लिया है।"

राजा इन उत्तरों को सुन बहुत सन्तुष्ट हुआ और महर्षि से बिदा लेकर खुशी खुशी राज महल पहुँचा।

उस दिन रात को जब व्यापारी नौकरों के साथ घर पहुँचा तो किवाड़ों को बन्द पा उसको आश्चर्य हुआ। घर की हर चीज उसने देखी। पर कुछ भी चोरी न गया था।

व्यापारी के नहाने के लिए एक नौकर रस्सी लेकर कुएँ से पानी लाने गया। वह कुएँ से पानी खींचने लगा। पर उसको ऐसा मालूम हुआ, जैसे कोई रस्सी नीचे की ओर खींच रहा हो। "अरे! भूत, भूत" चिल्लाता चिल्लाता, वह अपने मालिक के पास गया। व्यापारी स्वयं रोशनी लेकर वहाँ गया। जब उसने 'पारा' को रस्सी के सहारे ऊपर चढ़ते देखा तो वह भी हक्का-बक्का रह गया।

"बदमाश! कौन है तू मेरे कुंए में तुझे क्या काम?" व्यापारी ज़ोर से चिल्लाया।

"हुजूर! यह कौन-सा देश है? क्या गाँव है? मैं मिश्र का रहनेवाला हूँ। मैं जब नील नदी में नहा रहा था तो मैं एक भँवर में फँस गया। न मालूम, मैं कितने नीचे चला गया। जब मैं पानी से ऊपर आया, तब मैंने अपने को आपके कुँए में पाया।" 'पारा' ने झूठमूठ कहा। व्यापारी ने विश्वास कर लिया।

"बेटा! तुम्हारा तजुर्बा बहुत अजीब नज़र आता है। यह बग़दाद शहर है। बहुत दूर आ गये हो। कपड़े देता हूँ, पहन लो। आज रात यहीं सो रहो। कल सवेरे उठकर अपने गाँव के लिए खाना हो जाना।" व्यापारी ने कहा।

अगले दिन 'पारा' के पर पहुँचने पर, अहमद की जान में जान आई। जब

अहमद को 'पारा' के ठिकाने का पता न लगा, तो वह न खा ही पाया, न सो पाया। सवेरे उसने कोतवाल हसन की भी सलाह ली। वे बातें कर ही रहे थे कि 'पारा' वहाँ आ पहुँचा।

उसने दोनों का अपना किस्सा सुनाया। हसन ने सुनकर मुस्कराते हुए कहा-"इतना काम करनेवाली इस बगदाद शहर में सिर्फ एक ही एक है। और वह कबूतरों द्वारा डाक भेजनेवाली दिलैला की लड़की जीनाब है। तुम उसका क्या करना चाहते हो? बोलो न जल्दी?"

"करना क्या है? उससे शादी करने की मर्जी है।" 'पारा' ने कहा।

"इस कड़वे तजुर्बे के बावजूद भी?" हसन ने पूछा।

"चाहे वह लड़की कुछ भी करे, में उसको माफ कर दूँगा। वह मेरी पत्नी हो जाय तो मुझे और कुछ नहीं चाहिये।" पारा ने साफ़ साफ़ कहा।

"तो तुम्हारी मर्जी पूरी होनी ही चाहिये। तुम भी तो कम खूबसूरत नहीं हो। अच्छी जोड़ी बनेगी।" हसन ने मुस्कराते हुए कहा।

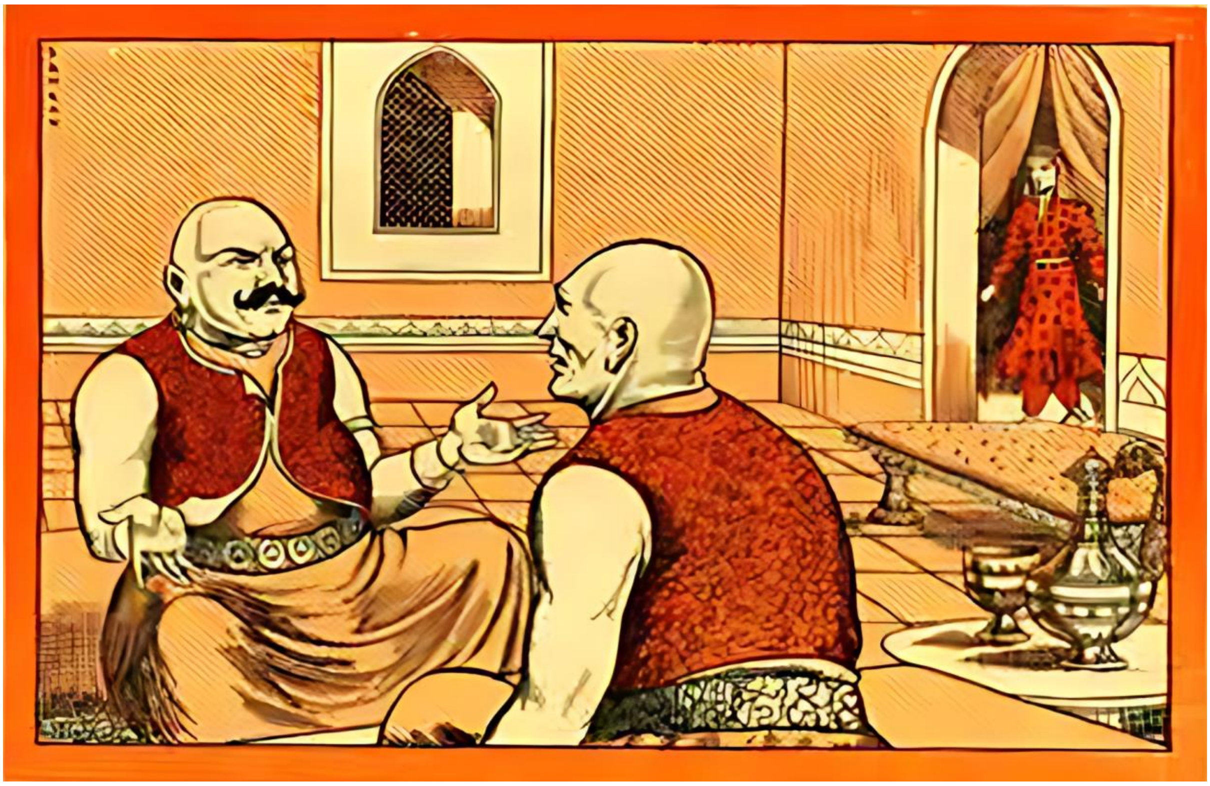

"अरे हसन भाई! जरा अपने दोस्त की मदद तो करो।" अहमद ने कहा।

हसन ने 'पारा' को एक सलाह दी।

'पारा' ने अपने शरीर पर काला रङ्ग पोत लिया और नीग्रो के समान कपड़े भी पहन लिये। थोड़े-बहुत पैसे और भङ्ग लेकर वह शाक-सब्जी खरीदने बाज़ार गया। उसने वहाँ दिलैला के रसोइये को खोजकर कहा-"अरे भाई! मैं इस शहर में नया आया हूँ। अपनी जात के आदमी हो। बहुत दिनों बाद दिखाई दिये हो। आओ थोड़ी पी आयें शराब।"

दिलैला के रसोइये ने कहा-"मुझे फुरसत नहीं है। तुम हमारे घर क्यों नहीं आते? वहाँ तुम्हें तरह तरह के शराब, खाने-पीने की चीजें दूँगा।"

'पारा' भी यह ही चाहता था। वह उस नीग्रो के साथ दिलैला के घर गया। रसोई घर में घुसा। इस बीच में दिलैला और जीनाब भोजन के लिए आये। रसोइया उनके खाने-पीने की चीज तैयार कर एक एक करके उनके सामने ले गया। उसके बाहर जाने पर 'पारा' ने पीनेवाले लोटों में भङ्ग मिला दी।

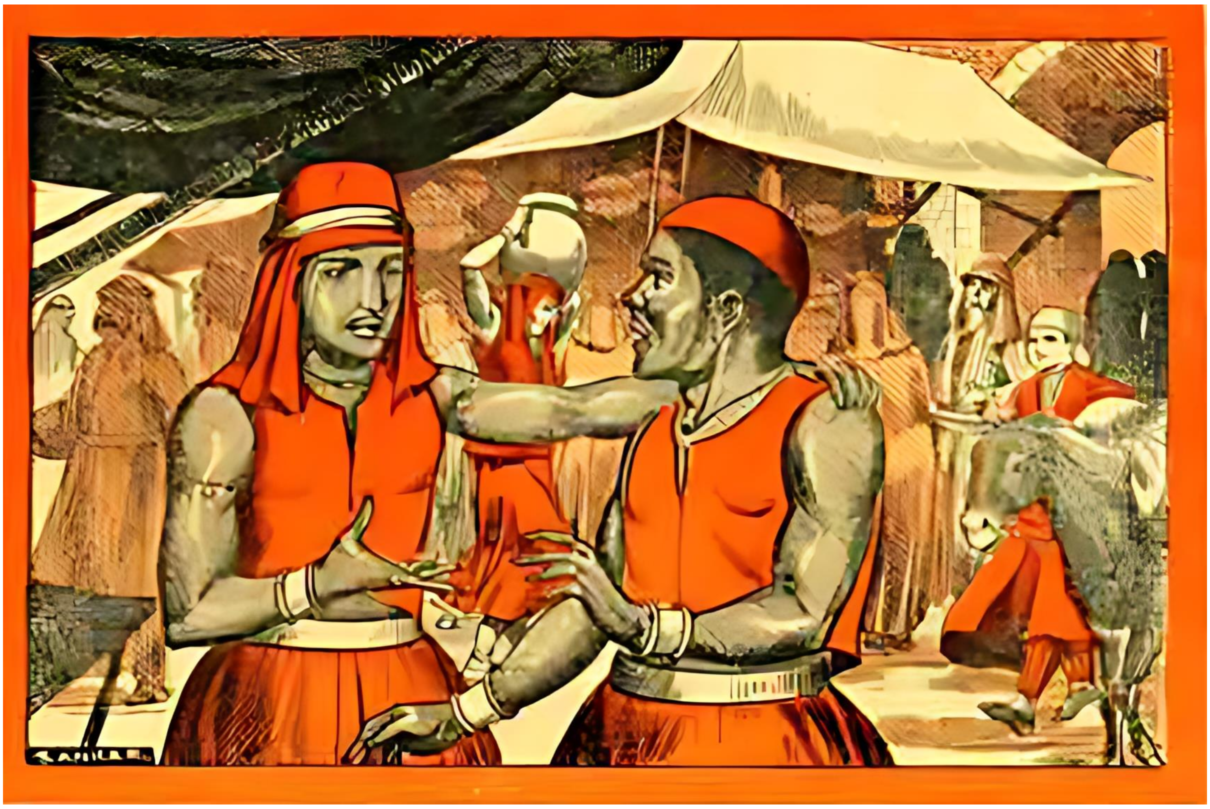

थोड़ी देर में 'पारा' की चाल कामयाब हुई। दिलैला, जीनाव, चालीस नीग्रो गुलाम, नीग्रो रसोइया, और तो और, शिकारी कुत्ते भी भङ्ग के असर से नशे में पड़े थे।

'पारा' जी भरके घर में घूमा। दिलैला के सरकारी कपड़े, सोने की टोपी, नीग्रो के लाल जरी के कपड़े इकट्ठे कर उसने एक बड़ा गट्ठर बाँध लिया और ऊपर जाकर सब कबूतरों को एक पिञ्जरे में बन्द कर दिया। "यह काम करनेवाला सिवाय बहादुर 'पारा'

अलि के और कोई नहीं है।" यह एक कागज़ पर लिखकर वह कबूतर और पोशाकें लेकर सीधे अहमद के घर पहुँचा।

जब दिलैला को होश आई, तब तक अन्धेरा हो चुका था। उसने 'पारा' का लिखा हुआ काग़ज़ देखा। पता लगा कि वह वही सामान ले गया था, जिनका खलीफा से ताल्लुक था।

दिलैला काफी देर तक सोचती रही। अगर यह बात फैल गई तो उसकी इज्जत पर धब्बा लगता और नौकरी भी ख़तरे में पड़ती। 'पारा' से बदला लेने से भी कोई फायदा न था। उससे अहमद ने ही यह काम करवाया होगा। उसके हाथ-पैर पकड़कर चीजों को वापस लेने के सिवाय और कोई रास्ता न था। उसने अहमद से बदला लेने के लिए, अपनी लड़की द्वारा 'पारा' की फजीहत करवाई थी और अब अहमद ने 'पारा' द्वारा उन पर बदला ले लिया था। अब दोनों में राज़ी हो सकती है। यह सोच "मैं अभी आई " कह कर दिलैला अहमद के घर गई।

उसके वहाँ पहुँचने पर अहमद, हसन, 'पारा' अलि वगैरह, खाना खा रहे थे। उसको देखते ही, अहमद और हसन ने सिर

झुकाकर सलाम करते हुए कहा- "आइये, तशरीफ लाइये।" बड़े अदब से उसकी अगवानी की।

जब दिलैला को पता लगा कि वे कबूतरों का शोरबा खा रहे थे तो दिलैला का कलेजा थम-सा गया, उसकी आँखों के सामने अन्धेरा छा गया। उसने काँपती हुई आवाज में पूछा-"भले ही अहमद को मुझ पर गुम्सा हो, पर क्या उसे खलीफा के डाक के कबूतरों को पकड़वाकर इस तरह खाना चाहिये था?"

"अगर यह मालूम होता कि ये डाक के कबूतर हैं तो हम पकाकर न खाते।" 'पारा' ने कहा। सब हँसने लगे।

हसन ने दिलैला को मनाते हुए कहा- "तू फिक्र न कर। डाक के कबूतर सही-सलामत हैं। खलीफा की दी हुई चीजे भी सब ठीक हैं। परन्तु इस छोटे लड़के की एक छोटी सी मर्जी है। अगर तूने उसकी मर्जी मञ्जूर कर ली तो हम तेरी पोशाक, डाक के कबूतर सब वापिस कर देंगे।"

"वह मर्जी क्या है, बताओ तो। क्या तुम नहीं जानते कि मैं बेबस कमज़ोर औरत हूँ।" दिलैला ने कहा।

"और कुछ नहीं। यह लड़का अली पारा तुम्हारी लड़की ज़ीनाब से शादी करना चाहता है।" हसन ने बताया।

"अरे! या खुदा। क्या इसी के लिए तुमने मुझे इतना तङ्ग किया है। अगर मैं मान भी जाऊँ, तब भी क्या फायदा? अगर ज़ीनाब न मानी तो कुछ न हो सकेगा। क्योंकि उसके बड़े होने तक उसका संरक्षक है मेरा बड़ा भाई जुरेक। जब तक वे न मान जायें, तब तक यह शादी नहीं हो सकती। आप लोग तो जुरेक को जानते ही हैं। मैं भी उसे मनाने की कोशिश

करूँगी। पर उसको मनाने की पूरी जिम्मेबारी 'पारा' अलि की है।" दिलैला ने कहा।

जुरेक को जैसे तैसे मनाकर, 'पारा' ने जीनाब से शादी करने की ठानी।

दिलैला अपने कपड़े और डाक कबूतर लेकर चली गई।

दिलैला का भाई जुरेक भी किसी जमाने में पक्का चोर था। अब बुढ़ापा आ गया था। इसलिये चोरी छोड़ दी थी। मछली बेचकर जिन्दगी गुजर कर रहा था। पर अब भी उसमें कई कमाल की खूबियाँ थीं।

जुरेक ने अपनी दुकान की ओर लोगों की दृष्टि खींचने के लिए एक बात सोची। उसने यह ढिँढोरा पिटवा दिया कि उसकी दुकान के दरवाजे पर हज़ार दीनारें एक थैली में रखी हैं। जो कोई उन्हें ले जायगा, वे उसी की हो जायेंगी। जैसे भी बन सके, उन दीनारों को लेने के लिए लोग हजारों की तादाद में आते और उसकी मछलियाँ खरीदकर जाते। परन्तु कोई भी उस थैली को न ले जा सका। क्योंकि जब कोई उस थैली को कोई छूता तो सारी दुकान में घण्टियाँ बजने लगती, ढोल की

आवाज़ आती। यह सुनते ही जुरेक भागा भागा आता और चोर को पकड़ लेता। नहीं तो उन पर रांगे की गोलियों मारता। कई के हाथ पैर टूट गये थे।

'पारा' अलि जुरेक से जाकर मिला। उसने अपना परिचय दिया। बताया कि वह अहमद के यहाँ ठहरा हुआ था और जीनाव से शादी करना चाहता था। उसने शादी के लिए उसकी अनुमति माँगी। पर जुरेक न माना।

'पारा' को सूझा कि जुरेक को, उसकी दीनारों की थैली चुराकर, प्रभावित करना चाहिये, तब वह शादी के लिए मान जायगा। इसलिये, वह गर्भिणी स्त्री का वेष बनाकर जुरेक की दुकान पर गया। मछली का भाव करते करते उसने "प्रसव वेदना" का बहाना किया। जुरेक घबरा गया और अन्दर पत्नी को बुलाने गया। उस समय पारा ने झट दीनारों की थैली पर हाथ मारा। तुरत दुकान में घण्टियाँ और ढोल बजने लगे। जुरेक दुकान में आया और उसने थैली लेकर भागते हुए 'पारा' अलि पर रांगे की गोली फेंकी। गोली की चोट से 'पारा'

अलि गिर गया। वह उठकर लड़खड़ाता लड़खड़ाता अहमद के घर पहुँचा।

जो यह नज़ारा देख रहे थे, उन्होंने जुरेक को बुरी तरह डाँटा-डपटा। "एक तो दीनारों को लटका कर लोगों को ललचाते हो। फिर उनको रांगे की गोलियों से मारते हो? शर्म नहीं आती?"

"इन बातों में क्या रखा है?" जुरेक ने बेपरवाही से कहा।

घाव ठीक होने के बाद 'पारा' जुरेक की दूकान की ओर फिर गया। वह जुरेक के हाथ मरने को तैयार था; पर जीनाव से शादी किए बगैर रहने के लिए तैयार न था।

इस बार 'पारा' नौकर का वेष धर हाथ में थैला लेकर गया। जुरेक के हाथ में उसने पाँच ताम्बे के सिके रखे। "मेहरबानी करके, जल्दी तले, गरमा गरम मछली मुझे दिलवा दो।"

"गरमागरम मछली चाहते हो तो आग जलाने तक ठहरो।" यह कह जुरेक अन्दर गया। तुरत 'पारा' ने दीनारों की थैली पकड़ी। घण्टे और ढोल बजने लगे। एक छलाङ्ग में जुरेक दुकान में आ पहुँचा। "तु समझता है कि मैने तुझे पहचाना नहीं है?" उसने रांगे की गोली 'पारा' के सिर का निशाना बनाकर फेंकी। 'पारा' जानता ही था कि वह रांगे की गोली

फेंकेगा, इसलिये बह झुक गया। रांगे की गोली ठीक जाकर एक दही के कसोरे में लगी, जिसे एक नौकर गली में ले जा रहा था। नौकर के पीछे एक काजी चला आ रहा था। दही उसके कपड़े और दाढ़ी पर गिरा।

आस-पड़ोस के लोगों ने जुरेक से कहा-"इसका बदला तुझे जरूर मिलेगा।"

(अभी और है)

अजीब चाल

विक्रमार्क हार मानना न जानता था। वह पेड़ से फिर शव को उतारकर कन्धे पर डाल चुपचाप श्मशान की तरफ चल पड़ा। "राजा! तुम इतनी मेहनत कर रहे हो। अगर तुम्हें मेरी बात पर विश्वास न हो, तो सुनो। मैं शीलवती की कहानी सुनाता हूँ।" बेताल ने यह कहानी सुनाई:

किसी जमाने में एक यज्ञदत नाम का ब्राह्मण, जिसके माँ-बाप बचपन में ही मर गये थे, काशी में खूब पढ़-लिखकर, रोजी की तलाश में विशालपुर पहुँचा। उस नगर का राजा धर्मपाल था। उसने यज्ञदत्त को नौकरी ही न दी, बल्कि एक अच्छी-सी लड़की से विवाह करवाकर, उसको घरवाला भी बना दिया। कालक्रम

से यज्ञदत्त के एक लड़की पैदा हुई। उसने उसका नाम शीलवती रखा।

जब रानी ने नामकरण संस्कार के दिन उसे देखा तो उसका मातृत्व भी जग उठा। रात दिन वह लड़की को अपने पास रखती, स्वयं उसको खिलाती पिलाती, देख-भाल करती।

रानी की अपनी सन्तान कोई न थी। परन्तु शीलवती के आते ही, वह भी गर्भिणी हुई और नौ मास बाद उसके भी लड़की पैदा हुई। उस लड़की का नाम कलावती रखा गया। सब का अनुमान था कि रानी अगर माता बनी थी तो उसका कारण शीलवती थी। यद्यपि वह खुद एक लड़की की माँ हो गई थी पर शीलवती के लिये उसका प्रेम तनिक भी कम न हुआ। कलावती उसको "बहन" कहकर पुकारा करती। जब वे दोनों बड़ी हुई तो एक ही गुरु के पास पढ़ने भेजी गई।

ज्यों ज्यों समय बीतता जाता था, शीलवती के बारे में उसके पिता यज्ञदत्त का भय भी त्यों त्यों बढ़ता जाता था। शीलवती ब्राह्मण कन्या की तरह न थी। अन्तःपुर में उसका पालन-पोषण हुआ था, इसलिये वह अधिक क्षत्रिय कन्या-सी

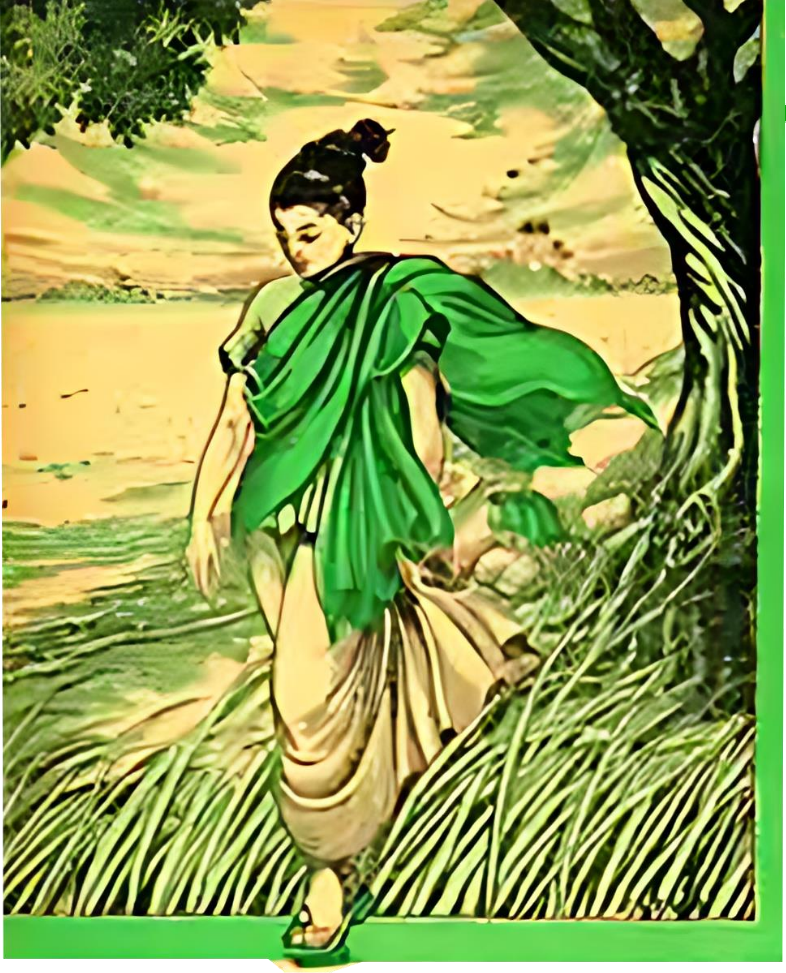

लगती थी। यज्ञदत्त को यह डर था कि कहीं वह अपने विवाह के लिये स्वयंवर न रचे। इसलिये उसने शीलवती के लिये एक सम्बन्ध ढूँढा और विवाह के लिये शुभ मुहूर्त भी निश्चित कर दिया।

यह मालूम होते ही शीलवती का मन बड़ा दुखा। उसने और कलावती ने पहले ही एक शपथ ले ली थी कि वे दोनों एक ही साथ विवाह करेंगी। इसलिए उसने वह विवाह न करने की ठानी।

एक दिन जब वे बगीचे से वापिस आ रही थीं तो शीलवती ने कलावती से कहा-"में अभी नदी में स्नान करके आती हूँ। तुम चलो।" वह नहाने चली गई। वह नदी किनारे एक पत्थर के नीचे, अपने कपड़े रख ब्रह्मचारी के वस्त्र पहन, सिर के बाल बाँध अकेली ही निकल पड़ी। जब "बहन' बहुत देर तक न आई, तो कलावती ने सेनिकों को नदी किनारे मेजा। उन्होंने शीलवती के कपड़े लाकर कहा-"वे कहीं नहीं दिखाई दी हैं।" यह जानकर कि शीलवती नदी मे डूबकर मर गई है, सबको बड़ा दुःख हुआ। कलावती ने यज्ञदत से कहा-"जब से आपने बहन की शादी निश्चित की थी, तभी से उसका मन अच्छा न था। वह विवाह करना न चाहती थी। यह सुनते ही यज्ञदत को लगा कि उसकी पुत्री ने जान बूझकर आत्महत्या की है और उसकी आत्महत्या का वह स्वयं ही कारण था। वह पागल-सा हो गया। पत्नी को साथ लेकर वह देश छोड़कर चला गया।"

और इधर शीलवती ब्रह्मचारी का वेश धारण कर चलते चलते ब्रह्मस्थल नाम के गाँव में पहुँची। गाँव में उससे कई ने पूछा-"क्यों बेटा, तुम कौन हो?"

शीलवती उनसे कहती-"मैं एक गरीब ब्रह्मचारी हूँ। मेरा नाम कृतवर्मा है। मेरा कोई नहीं है। पढ़ने के लिये काशी जा रहा हूँ।"

"पढ़ना ही हो तो क्या बेटा, काशी जाना जरूरी है? इस गाँव में सोमभट्ट नाम का एक पण्डित है। उसने भी काशी में पढ़ा था। उसके पास पढ़ सकते हो।" गाँववाले उसको सोमभट्ट के घर ले गये। सोमभट्ट, ब्रह्मचारी वेश धरे शीलवती को देखकर बहुत खुश हुआ। वह उसको पढ़ाने लिखाने के लिये मान गया।

सोमभट्ट की एक लड़की थी। उसका नाम सत्यवती था। यों तो देखने में वह बदसूरत थी, तिस पर चेहरे पर चेचक के दाग़ थे। एक ही आँख रह गई थी। वह विवाह के लायक बड़ी हो चुकी थी। सोमभट्ट अपनी लड़की को घर से कहीं बाहर न जाने देता। क्योंकि वह जी जान से उसके लिये यर ढूँढ़ रहा था। आखिर विद्याभास्कर नामक एक ब्राह्मण उससे विवाह करने के लिये मान गया। लेवा-देवा भी हो गई थी। परन्तु शादी के दिन से पहले किसी ने कहा

कि सोमभट्ट की लड़की बहुत ही बदसूरत है। इसलिये उसने जिद पकड़ी कि बिना लड़की को देखे वह विवाह न करेगा। उसने सोमभट्ट के पास ख़बर भी भिजवा दी कि थोड़े दिनों में वह लड़की को देखने आयेगा।

सोमभट्ट को इस झञ्झट से बाहर निकलने के लिये एक उपाय सूझा। उसने शीलवती को अलग बुलाकर कहा-"देखो, बेटा! तुम्हें मेरी एक मदद करनी होगी। यह अच्छा ही हुआ कि तुम्हारे देश के ब्रह्मचारी औरतों की तरह बाल रखते हैं।

क्या तुम एक बार स्त्री का वेष धारण कर सकोगे?" उसने अपनी लड़की के बारे में सब कुछ सच सच बता दिया।

वह तुरन्त सोमभट्ट का सुझाव मान गई। थोड़े दिनों में विद्याभास्कर दुल्हन देखने आया। जब शीलवती को अच्छी जाकेट, साड़ी और गहने पहनाये गये तो वह बहुत ही खूबसूरत दीखने लगी। उसको देखकर विद्याभास्कर बहुत ही खुश हुआ। वह विवाह के लिए मान गया।

सोमभट्ट ने विवाह की तैयारियाँ शुरु कर दीं। वह बहुत धनी था। इसलिये उसने दूर दूर के बन्धुओं के पास निमन्त्रण पत्र भेजे। उनमें कई ऐसे भी थे, जिन्होंने कभी भी सोमभट्ट की लड़की को न देखा था। सब बन्धुओं को सोमभट्ट ने शीलवती को ही दिखाया। उसे देख वे बड़े सन्तुष्ट हुए। सोमभट्ट यह सोच रहा था कि शादी तक जैसे तैसे उसकी यह चाल चलती रहे और ऐन मुहूर्त पर वह अपनी लड़की को वेदिका पर ले आयेगा, और उसका विवाह हो जायेगा।

गाँव में बराती आ गये। सोमभट्ट ने अपनी लड़की को दुल्हन बनाया और उसको एक बड़े टोकरे में रख, अन्धेरी कोठरी में रख दिया। गौरी पूजा के लिये शीलवती ही गई। उस समय, बराती उसको देखकर फूले न समाये। गौरी पूजा के समाप्त होते ही जब सोमभट्ट शीलवती को एक टोकरे में बिठाकर, उसको अन्धेरी कोठरी की ओर ले जाने लगा तब बरातियों का पुरोहित चिल्लाया- "जी! आप दुल्हन को कहाँ ले जा रहे हैं? मुहुर्त का समय हो गया है।"

"हम लोगों के यहाँ यह रीति है कि शादी से पहले दुल्हन थोड़ी देर के

लिये मामा के पास भेजी जाती है।" सोमभट्ट ने कहा।

"हम लोगों के यहाँ तो कोई ऐसी रीति नहीं है। जल्दी दुल्हन को ले आइये।" पुरोहित जल्दी करने लगा।

तब सोमभट्ट ने अपने साले को इशारा करके कहा-"लड़की को ले आओ।" वह कोठरी में गया। और जो टोकरा उसके हाथ लगा, उसी को ले आया और लाकर विवाह मञ्च पर रख दिया। वह वही टोकरा था, जिसमें शीलवती थी। जब मङ्गल सूत्र बाँध दिया गया और पान, आदि का अदला बदला हुआ। तब जाकर सोमभट्ट को पता लगा कि उसकी लड़की अब भी अन्धेरी कोठरी में, टोकरे में बन्द थी।

सोमभट्ट को डर लगा। उसका अब भी यह ख्याल था कि शीलवती लड़की नहीं लड़का है। पोल खुलने से पहले उसको लड़के को लड़की बनाने का उपाय सोचना था। उसने घर के अन्दर जाकर अपनी पत्नी के कान में कुछ कहा। यकायक वह पागल की तरह चिल्लाने लगी, मानों घर की देवी क्रुद्ध हो उठी हो-"मुझे ही भूल गये हो? मेरी पूजा किये बगैर

तुम अपनी लड़की की शादी करते हो? देखो, मैं तुम्हारी लड़की का क्या करता हूँ।"

जब घबराये हुए सब अन्दर मागे, तो वहाँ सबने सत्यवती को दुल्हन के रूप में देखा। सोमभट्ट पछतावे का दिखावा करने लगा। "माई मुझे क्षमा करो! फिर मेरी लड़की को सुन्दर बना दो।" सोमभट्ट कहने लगा। परन्तु तब तक सोमभट्ट के पत्नी का पागलपन ठीक हो गया था। विद्याभास्कर चाल न समझ सका।

उसने कहा- "ससुर जी! जब मेरा भाग्य ही खराब है, तब आप ही क्या कर सकते

हैं बदसूरत हो, या खूबसूरत, जब शादी की है तो शादी निभानी ही होगी।" उसने सोमभट्ट को आश्वासन दिया।

उसी समय, यज्ञदत्त भी अपनी पत्नी को लेकर वहाँ पहुँचा। सोमभट्ट और यज्ञदत बचपन के साथी थे। काशी में, दोनों ने एक ही गुरु के यहाँ शिक्षा पाई थी। सोमभट्ट ने यज्ञदत को सारा किस्सा सुनाया। यज्ञदत्त ने जब कृतवर्मा को बुलवाया तो उसने पहचान लिया कि वह उसकी लड़की शीलवती ही थी।

यह कथा सुनाकर बेताल ने पूछा- "राजा! यज्ञदत्त क्या यह सोचे कि उसकी लड़की का विवाह हो गया है? या उसको उस विवाह का समर्थन करना चाहिये? अगर तुमने जान बूझकर इन प्रश्नों का उत्तर न दिया, तो तुम्हारा सिर फूट जायेगा। सोच समझ लो।"

"सचमुच शीलवती ही विद्यमास्कर की पत्नी है। उसको देखकर ही उसने विवाह करना स्वीकार किया था। उसके गले में ही उसने मङ्गलसूत्र बाँधा था। यद्यपि वह बदसूरत हो गई थी, पर यह जानकर कि वह वही लड़की थी, वह उसके साथ रहने को मान गया था। शीलवती ने ज़रूरत से अधिक मदद देकर गले में मङ्गलसूत्र भी बँधवा दिया था। यानी, वह भी वह विवाह चाहती थी। और विवाह स्थिर करने के बाद जब यह मालूम हुआ कि कृतवर्मा सचमुच स्त्री थी, तब भी सोमभट्ट ने विवाह के बारे में कोई आपत्ति न की। इसका मतलब यह हुआ कि विवाह शीलवती का हुआ सत्यवती का नहीं।" विक्रमार्क ने कहा।

इस प्रकार राजा का मौन भङ्ग होते ही, बेताल शव के साथ फिर पेड़ पर जा बैठा।

चित्र-कथा चित्र